[2019] 3 उम. नि. प. 235

मारवाड़ी बालिका विद्यालय

बनाम

आशा श्रीवास्तव और अन्य

[2013 की सिविल अपील सं. 9166]

14 फरवरी, 2019

न्यायमूर्ति अरुण मिश्रा और न्यायमूर्ति नवीन सिन्हा

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 12, 14, 39(घ), 133, और 311(2) [सपठित दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम, 1973 की धारा 8(2)] – अपील – गैर-मान्यताप्राप्त प्राइवेट विद्यालय के कर्मचारी की सेवा समाप्ति का आदेश पारित होना – आदेश पारित करने के पूर्व विभागीय जांच नहीं होना तथा सक्षम प्राधिकारी का पूर्व अनुमोदन प्राप्त नहीं होना – आदेश को चुनौती देना – आदेश खारिज होना – चाहे मान्यताप्राप्त सरकारी विद्यालय हो या गैर-मान्यताप्राप्त प्राइवेट विद्यालय हो, के कर्मचारी की सेवा समाप्ति, विभागीय जांच किए बिना और सक्षम प्राधिकारी के पूर्व अनुमोदन के बिना नहीं की जा सकती है यदि इनके उल्लंघन में किसी कर्मचारी की सेवा समाप्ति का आदेश पारित किया जाता है तो ऐसा आदेश मनमाना, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के विरुद्ध और अविधिमान्य माना जाएगा ।

मामले के तथ्य यह है कि इसमें का प्रत्यर्थी सं. 1 ने वर्ष 1985 में सहायक अध्यापक के पद के लिए आवेदन किया था और साक्षात्कार के पश्चात् वह तारीख 1 अप्रैल, 1995 से प्रोबेशन पर अपीलार्थी-विद्यालय में सहायक अध्यापक के रूप में नियुक्त हुई थी । विद्यालय प्राधिकारी ने तारीख 31 मार्च, 1995 को अनुमोदन की ईप्सा करते हुए, संबंधित जिला विद्यालय निरीक्षक के पास सभी अपेक्षित कागजातों को भेजा था । तारीख 2 जनवरी, 1997 को संबंधित जिला विद्यालय निरीक्षक (प्राइमरी शिक्षा), कलकत्ता ने उन कागजातों को अपनी राय देने के लिए विद्यालय शिक्षा निदेशक, पश्चिम बंगाल के पास भेजा जिन्होंने संबंधित

जिला विद्यालय निरीक्षक से यह निवेदन किया कि वह इसमें के प्रत्यर्थी सं. 1 से यह घोषणा प्रस्तुत करने के लिए कहे कि वह कोई वेतन बकाया का दावा नहीं करेगी । प्रत्यर्थी सं. 1 ने ऐसा वचनपत्र देने के लिए सहमत होने में अपनी अनिच्छा व्यक्त की । इसके पश्चात्, अनुमोदन मंजूर करने में विलंब किया गया और प्रत्यर्थी सं. 1 ने तारीख 27 नवम्बर, 2000 को उच्च न्यायालय के समक्ष 2000 की रिट आवेदन सं. 3232 फाइल की यह ईप्सा करते हुए कि विद्यालय शिक्षा निदेशक, पश्चिम बंगाल और संबंधित जिला विद्यालय निरीक्षक को उसकी नियुक्ति का अनुमोदन प्रदान करने का समादेश देते हुए, परमादेश का रिट जारी किया जाए । उच्च न्यायालय ने 2000 की रिट याचिका सं. 3232 में तारीख 18 दिसम्बर, 2000 के आदेश द्वारा रिट याचिका का निपटारा करते हुए, जिला विद्यालय निरीक्षक को छह माह की अवधि के भीतर अपीलार्थी-विद्यालय में सहायक अध्यापक के रूप में प्रत्यर्थी सं. 1 की नियुक्ति के अनुमोदन के संबंध में मामले पर विचार करने के लिए निर्देश दिया । रिट याचिका में पारित आदेश की संसूचना अपीलार्थी-विद्यालय को दिया गया जिसके परिणामस्वरूप, प्रबंध समिति के सचिव द्वारा इसमें के प्रत्यर्थी सं. 1 को यह कारण बताओ नोटिस जारी किया गया कि क्यों उसने कार्यवाही में एक पक्षकार के रूप में जिला विद्यालय निरीक्षक (प्राइमरी शिक्षा), कलकत्ता को पक्षकार बनाते हुए, रिट याचिका फाइल की जो विद्यालय का अनुशासन भंग करने की कोटि में आता है । इस पत्र के साथ निलंबन का आदेश भी जारी किया गया और उसे बारह दिनों के लिए अर्थात् तारीख 21 दिसम्बर, 2000 से तारीख 1 जनवरी, 2001 तक की अवधि के लिए निलंबित कर दिया गया । अपीलार्थी-विद्यालय के पत्रों के उत्तर में प्रत्यर्थी सं. 1 ने अपने विरुद्ध आरोपों से इनकार किया । निलंबन की अवधि बीतने के पश्चात्, प्रत्यर्थी सं. 1 ने अपने कर्तव्यों को ग्रहण किया । उसे उपस्थिति पंजिका में हस्ताक्षर करना मंजूर कर लिया गया किन्तु उसे कक्षाओं में पढ़ाने से रोक दिया गया । प्रत्यर्थी सं. 1 ने छुट्टी के लिए आवेदन किया और तारीख 14 फरवरी, 2001 को उसने पुन: अपने कर्तव्यों को ग्रहण किया किन्तु, उसे उसके कर्तव्यों का पालन करने नहीं दिया गया । प्रबंध समिति के सचिव द्वारा उसे एक पत्र जारी किया गया यह कहते हुए कि उसने तारीख 15 फरवरी, 2001 से अपने कर्तव्यों को क्यों नहीं किया ।

किन्तु, वह निरंतर विद्यालय आती रही और कक्षाओं में पढ़ाती रहीं । तारीख 19 फरवरी, 2001 को उसे पुलिस की सहायता से बलपूर्वक विद्यालय से निकाल दिया गया और उस एक बैठक में उपस्थित होने के लिए कहा गया जिसमें उसे सेवा से समाप्ति का सामना करने की धमकी दी गई । तारीख 20 फरवरी, 2001 को उसे दो चेक संबद्ध करते हुए सेवा समाप्ति का पत्र जारी किया गया । सेवा समाप्ति के आदेश को आक्षेपित करते हुए, प्रत्यर्थी सं. 1 ने उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट आवेदन फाइल किया । उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने तारीख 20 अगस्त, 2001 के आदेश द्वारा 2001 की रिट याचिका सं. 889 को इस आधार पर खारिज कर दिया कि क्योंकि संबंधित विद्यालय, राज्य सरकार द्वारा मान्यताप्राप्त प्राइमरी विद्यालय नहीं है अपितु एक प्राइवेट तौर पर प्रबंध प्राइमरी विद्यालय है, इसलिए रिट आवेदन कायम रखे जाने योग्य नहीं है । तथापि, प्रत्यर्थी सं. 1 को रिट याचिका में दावाकृत अनुतोष की ईप्सा करते हुए समुचित वाद संस्थित करना मंजूर कर लिया था । 2001 की रिट याचिका सं. 889 को खारिज किए जाने को चुनौती देते हुए, प्रत्यर्थी सं. 1 ने उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ के समक्ष अपील फाइल की । खंड न्यायपीठ ने 2001 की रिट याचिका सं. 889 में 2001 की एपीओटी सं. 709 में तारीख 30 जनवरी, 2009 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा प्रस्तुत अपील को मंजूर कर लिया और सेवा समाप्ति के आदेश को अपास्त कर दिया और प्रत्यर्थी सं. 1 को विधि के अनुसार, वेतन, भत्ते और सेवा फायदे के पूर्ण हक के साथ छह सप्ताह के भीतर अपीलार्थी विद्यालय में सेवा ग्रहण करना मंजूर कर लिया । खंड न्यायपीठ के इस आदेश को इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई है । न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रथमत:, न्यायालय रिट आवेदन को कायम रखने से संबंधित प्रश्न की परीक्षा करता है । रिट आवेदन में यह स्पष्टत: प्रकथन किया गया है कि नियुक्ति प्रथम प्रेरणा पर दो वर्षों के लिए परीविक्षा पर की गई थी । यह विवादित नहीं है कि वर्तमान मामले में, नियुक्ति का अनुमोदन 1 जनवरी, 2001 से भूतलक्षी प्रभाव के साथ किया गया था और तारीख 20 फरवरी, 2001 को पारित पदच्युति के प्रयोजन के लिए स्वीकृतत: कोई अनुमोदन प्राप्त किया था । रिट आवेदन में यह स्पष्टत:

अभिवचन किया गया है कि अनुमोदन आवश्यक था, उत्तर में इससे इनकार करना अस्पष्ट है । वर्तमान मामले में, ऐसा कोई अनुमोदन प्राप्त नहीं किया गया था । यह प्रकट होता है कि सरकार ने भी अपने उत्तर में अभिवाक् किया है कि नियुक्ति का अनुमोदन, नियुक्तियों में मनमानेपन पर विचार करने के लिए आवश्यक बनाया गया था जो अविभावी था और नियुक्ति के लिए एक बार अनुमोदन आवश्यक था, इस बारे में कोई संदेह नहीं है कि पदच्युति के लिए भी अनुमोदन आवश्यक था जिसे वर्तमान मामले में प्राप्त नहीं किया गया था । न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि रिट आवेदन कायम रखे जाने योग्य है जैसा कि उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ द्वारा सही ही अभिनिर्धारित किया गया है । अब, न्यायालय पुन: बहाली और पिछली मजदूरियों के अनुतोष के प्रश्न पर विचार करता है, वर्तमान मामले के तथ्यात्मक पहलू को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय को इस तथ्य को ध्यान में रखना है कि संबंधित प्राधिकारियों का अनुमोदन नहीं लिया गया था और आक्षेपित पदच्युति आदेश अत्यधिक मनमाने तरीके से पारित किया गया था । यह विवादित नहीं है कि कोई विभागीय जांच नहीं की गई थी । वर्तमान मामले में, कर्मचारी, जांच किए बिना पारित आक्षेपित आदेश द्वारा सेवा से पदच्युति करने के पूर्व पांच वर्ष की सेवा कर चुका है, न्यायालय, अपीलार्थी-विद्यालय के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा उद्धृत इस निवेदन को ग्रहण नहीं कर सकता है कि पिछली मजदूरियों से इनकार कर देना चाहिए । तरीका जिसमें सेवा समाप्ति का आदेश पारित किया गया था, स्पष्टत: मनमाना है तथा आदेश, अवैध और शून्य है और इस प्रकार, पिछली मजदूरियों को दिया जाना चाहिए । (पैरा 12, 20, 21 और 23)

अवलंबित निर्णय

पैरा

[2016] (2016) 6 एस. सी. सी. 541 :
राज कुमार बनाम **शिक्षा निदेशक और अन्य** ; 10,13,14

[2015] (2015) 17 एस. सी. सी. 353 :
प्रबंध समिति, दिल्ली पब्लिक विद्यालय और अन्य बनाम **एम. के. गांधी और अन्य** ; 8,16

[2012] (2012) 12 एस. सी. सी. 331 :
रमेश अहलुवालिया बनाम **पंजाब राज्य और अन्य** ; 10,15

[2011] (2011) 13 एस. सी. सी. 760 :
सतिम्बला शर्मा और अन्य बनाम
सेंट पॉल सीनियर सेकेंडरी विद्यालय और अन्य ; 8,17

[2006] (2006) 7 एस. सी. सी. 680 :
सुष्मिता बसु और अन्य बनाम
बल्लीगुंजे शिक्षा समिति और अन्य ; 8,18,19

[1984] (1984) 2 एस. सी. सी. 369 :
अनूप जायसवाल बनाम **भारत सरकार और एक अन्य** । 22

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2013 की सिविल अपील सं. 9166.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 133 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री संजीव सेन, ज्येष्ठ अधिवक्ता, सब्यसाची पात्रा, सयान रे, सौमो पाटिल, मैसर्स खेतान एंड कंपनी, अधिवक्तागण

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री अरुण के. सिन्हा, स्वास्तिक वर्मा, सिन्हा श्रेय निखिलेश, सुहान मुखर्जी, (सुश्री) आस्था शर्मा, अमित वर्मा, डिम्पल नागपाल, मैसर्स पी. एल. आर. चेम्बर्स एंड कंपनी, अधिवक्तागण

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अरुण मिश्रा ने दिया ।

न्या. मिश्रा – अपील में विचार के लिए मुख्य प्रश्न यह है कि क्या महंगाई भत्ते की सीमा तक मंजूर सहायता प्राप्त करने वाले प्राइवेट विद्यालय के विरुद्ध रिट याचिका कायम रखे जाने योग्य है । अपील, कलकत्ता उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ द्वारा पारित तारीख 30

जनवरी, 2009 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा फाइल अपील को पिछली मजदूरियों के साथ उसकी बहाली का निर्देश देते हुए, मंजूर कर लिया गया था ।

2. मामले के तथ्य यह है कि इसमें का प्रत्यर्थी सं. 1 ने वर्ष 1985 में सहायक अध्यापक के पद के लिए आवेदन किया था और साक्षात्कार के पश्चात् वह तारीख 1 अप्रैल, 1995 से प्रोबेशन पर अपीलार्थी-विद्यालय में सहायक अध्यापक के रूप में नियुक्त हुई थी । विद्यालय प्राधिकारी ने तारीख 31 मार्च, 1995 को अनुमोदन की ईप्सा करते हुए, संबंधित जिला विद्यालय निरीक्षक के पास सभी अपेक्षित कागजातों को भेजा था । तारीख 2 जनवरी, 1997 को संबंधित जिला विद्यालय निरीक्षक (प्राइमरी शिक्षा), कलकत्ता ने उन कागजातों को अपनी राय देने के लिए विद्यालय शिक्षा निदेशक, पश्चिम बंगाल के पास भेजा जिन्होंने संबंधित जिला विद्यालय निरीक्षक से यह निवेदन किया कि वह इसमें के प्रत्यर्थी सं. 1 से यह घोषणा प्रस्तुत करने के लिए कहे कि वह कोई वेतन बकाया का दावा नहीं करेगी । प्रत्यर्थी सं. 1 ने ऐसा वचनपत्र देने के लिए सहमत होने में अपनी अनिच्छा व्यक्त की ।

3. इसके पश्चात्, अनुमोदन मंजूर करने में विलंब किया गया और प्रत्यर्थी सं. 1 ने तारीख 27 नवम्बर, 2000 को उच्च न्यायालय के समक्ष 2000 की रिट आवेदन सं. 3232 फाइल की यह ईप्सा करते हुए कि विद्यालय शिक्षा निदेशक, पश्चिम बंगाल और संबंधित जिला विद्यालय निरीक्षक को उसकी नियुक्ति का अनुमोदन प्रदान करने का समादेश देते हुए, परमादेश का रिट जारी किया जाए । उच्च न्यायालय ने 2000 की रिट याचिका सं. 3232 में तारीख 18 दिसम्बर, 2000 के आदेश द्वारा रिट याचिका का निपटारा करते हुए, जिला विद्यालय निरीक्षक को छह माह की अवधि के भीतर अपीलार्थी-विद्यालय में सहायक अध्यापक के रूप में प्रत्यर्थी सं. 1 की नियुक्ति के अनुमोदन के संबंध में मामले पर विचार करने के लिए निर्देश दिया ।

4. रिट याचिका में पारित आदेश की संसूचना अपीलार्थी-विद्यालय को दिया गया जिसके परिणामस्वरूप, प्रबंध समिति के सचिव द्वारा

इसमें के प्रत्यर्थी सं. 1 को यह कारण बताओ नोटिस जारी किया गया कि क्यों उसने कार्यवाही में एक पक्षकार के रूप में जिला विद्यालय निरीक्षक (प्राइमरी शिक्षा), कलकत्ता को पक्षकार बनाते हुए, रिट याचिका फाइल की जो विद्यालय का अनुशासन भंग करने की कोटि में आता है । इस पत्र के साथ निलंबन का आदेश भी जारी किया गया और उसे बारह दिनों के लिए अर्थात् तारीख 21 दिसम्बर, 2000 से तारीख 1 जनवरी, 2001 तक की अवधि के लिए निलंबित कर दिया गया ।

5. अपीलार्थी-विद्यालय के पत्रों के उत्तर में प्रत्यर्थी सं. 1 ने अपने विरुद्ध आरोपों से इनकार किया । निलंबन की अवधि बीतने के पश्चात्, प्रत्यर्थी सं. 1 ने अपने कर्तव्यों को ग्रहण किया । उसे उपस्थिति पंजिका में हस्ताक्षर करना मंजूर कर लिया गया किन्तु उसे कक्षाओं में पढ़ाने से रोक दिया गया । प्रत्यर्थी सं. 1 ने छुट्टी के लिए आवेदन किया और तारीख 14 फरवरी, 2001 को उसने पुन: अपने कर्तव्यों को ग्रहण किया किन्तु, उसे उसके कर्तव्यों का पालन करने नहीं दिया गया । प्रबंध समिति के सचिव द्वारा उसे एक पत्र जारी किया गया यह कहते हुए कि उसने तारीख 15 फरवरी, 2001 से अपने कर्तव्यों को क्यों नहीं किया । किन्तु, वह निरंतर विद्यालय आती रही और कक्षाओं में पढ़ाती रही । तारीख 19 फरवरी, 2001 को उसे पुलिस की सहायता से बलपूर्वक विद्यालय से निकाल दिया गया और उस एक बैठक में उपस्थित होने के लिए कहा गया जिसमें उसे सेवा से समाप्ति का सामना करने की धमकी दी गई । तारीख 20 फरवरी, 2001 को उसे दो चैक संबद्ध करते हुए सेवा समाप्ति का पत्र जारी किया गया ।

6. सेवा समाप्ति के आदेश को आक्षेपित करते हुए, प्रत्यर्थी सं. 1 ने उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट आवेदन फाइल किया । उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने तारीख 20 अगस्त, 2001 के आदेश द्वारा 2001 की रिट याचिका सं. 889 को इस आधार पर खारिज कर दिया कि क्योंकि संबंधित विद्यालय, राज्य सरकार द्वारा मान्यताप्राप्त प्राइमरी विद्यालय नहीं है अपितु एक प्राइवेट तौर पर प्रबंध प्राइमरी विद्यालय है, इसलिए रिट आवेदन कायम रखे जाने योग्य नहीं है । तथापि, प्रत्यर्थी सं. 1 को रिट याचिका में दावाकृत अनुतोष की

ईप्सा करते हुए समुचित वाद संस्थित करना मंजूर कर लिया था ।

7. 2001 की रिट याचिका सं. 889 को खारिज किए जाने को चुनौती देते हुए, प्रत्यर्थी सं. 1 ने उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ के समक्ष अपील फाइल की । खंड न्यायपीठ ने 2001 की रिट याचिका सं. 889 में 2001 की एपीओटी सं. 709 में तारीख 30 जनवरी, 2009 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा प्रस्तुत अपील को मंजूर कर लिया और सेवा समाप्ति के आदेश को अपास्त कर दिया और प्रत्यर्थी सं. 1 को विधि के अनुसार, वेतन, भत्ते और सेवा फायदे के पूर्ण हक के साथ छह सप्ताह के भीतर अपीलार्थी विद्यालय में सेवा ग्रहण करना मंजूर कर लिया । खंड न्यायपीठ के इस आदेश को इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई है ।

8. अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ कांउसेल श्री संजीव सेन ने यह तर्क दिया कि प्राइवेट गैर-सहायता प्राप्त विद्यालय के विरुद्ध रिट आवेदन, **प्रबंध समिति, दिल्ली पब्लिक विद्यालय और अन्य** बनाम **एम. के. गांधी और अन्य**[1], **सुष्मिता बसु और अन्य** बनाम **बल्लीगुंजे शिक्षा समिति और अन्य**[2] और **सतिम्बला शर्मा और अन्य** बनाम **सेंट पॉल सीनियर सेकेंडरी विद्यालय और अन्य**[3] वाले मामलों में इस न्यायालय की विनिश्चयों को ध्यान में रखते हुए कायम रखे जाने योग्य नहीं है ।

9. अपीलार्थियों की ओर से यह भी निवेदन किया गया है कि एकल न्यायाधीश या खंड न्यायपीठ को सेवा समाप्ति के आदेश और उस आधार की जिस पर सेवा समाप्ति का आदेश पारित किया गया है, की वैधता पर विचार करना चाहिए था । प्रत्यर्थी कर्मचारी, अनधीनता की दोषी थी और सेवा समाप्ति के आदेश में यथा उल्लिखित गंदी भाषा का प्रयोग किया था । विद्वान् काउंसेल ने यह भी इंगित किया कि प्रत्यर्थी-कर्मचारी से स्पष्टीकरण देने को कहा गया था किन्तु वह कोई संतोषजनक स्पष्टीकरण प्रस्तुत नहीं कर सकी थी और परिणामतः,

---

[1] (2015) 17 एस. सी. सी. 353.

[2] (2006) 7 एस. सी. सी. 680.

[3] (2011) 13 एस. सी. सी. 760.

उसकी सेवाएं समाप्त कर दी गई थीं । उन्होंने निवेदन किया कि उसे सुना गया था और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का कोई अतिक्रमण नहीं हुआ है ।

10. उन्होंने यह भी तर्क दिया कि रिट आवेदन में पिछली मजदूरियों को मंजूर करने के लिए कोई प्रार्थना नहीं की गई थी और खंड न्यायपीठ ने वर्तमान मामले में पुन: बहाली का अनुतोष मंजूर करने के लिए कोई कारण समनुदेशित नहीं किया है । विद्वान् काउंसेल ने यह प्रार्थना की है कि पिछली मजदूरियों को पुन: बहाली के मामले में मंजूर करना कायम नहीं रखा जा सकता है ।

11. प्रत्यर्थी-कर्मचारी के विद्वान् काउंसेल श्री अरुण के. सिन्हा ने **रमेश अहलुवालिया** बनाम **पंजाब राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में, इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लिया है । उन्होंने **राज कुमार** बनाम **शिक्षा निदेशक और और अन्य**[2] वाले मामले के विनिश्चय पर भी जोर देते हुए यह निवेदन किया है कि संबंधित सरकारी प्राधिकारी का अनुमोदन नियुक्ति के लिए आवश्यक था, यह सेवा समाप्ति के लिए आवश्यक था जिसे उच्च न्यायालय ने भी माना है, सेवा समाप्ति अवैध और शून्य थी । पिछली मजदूरियों और पुन: बहाली का आदेश सही ही पारित किया गया है क्योंकि सेवा समाप्ति का आदेश पारित करने के पूर्व कोई विभागीय जांच नहीं की गई थी ।

12. प्रथमत:, हम रिट आवेदन को कायम रखने से संबंधित प्रश्न की परीक्षा करते हैं । रिट आवेदन में यह स्पष्टत: प्रकथन किया गया है कि नियुक्ति प्रथम प्रेरणा पर दो वर्षों के लिए परिवीक्षा पर की गई थी । यह विवादित नहीं है कि वर्तमान मामले में, नियुक्ति का अनुमोदन 1 जनवरी, 2001 से भूतलक्षी प्रभाव के साथ किया गया था और तारीख 20 फरवरी, 2001 को पारित पदच्युति के प्रयोजन के लिए स्वीकृतत: कोई अनुमोदन प्राप्त किया था । रिट आवेदन में यह स्पष्टत: अभिवचन किया गया है कि अनुमोदन आवश्यक था, उत्तर में इससे इनकार करना अस्पष्ट है । वर्तमान मामले में, ऐसा कोई अनुमोदन प्राप्त नहीं किया

---

[1] (2012) 12 एस. सी. सी. 331.

[2] (2016) 6 एस. सी. सी. 541.

गया था । यह प्रकट होता है कि सरकार ने भी अपने उत्तर में अभिवाक् किया है कि नियुक्ति का अनुमोदन, नियुक्तियों में मनमानेपन पर विचार करने के लिए आवश्यक बनाया गया था जो अविभावी था और नियुक्ति के लिए एक बार अनुमोदन आवश्यक था, इस बारे में कोई संदेह नहीं है कि पदच्युति के लिए भी अनुमोदन आवश्यक था जिसे वर्तमान मामले में प्राप्त नहीं किया गया था ।

13. **राज कुमार** बनाम **शिक्षा निदेशक और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम, 1973, कर्मचारी के पक्ष में एक प्रक्रियात्मक रक्षोपाय है, यह सुनिश्चित करने के लिए कि सेवा समाप्ति या पदच्युति का आदेश शिक्षा निदेशक के पूर्व अनुमोदन के बिना पारित नहीं किया गया है जो मान्यताप्राप्त प्राइवेट विद्यालय के भी कर्मचारी की मनमाना या अयुक्तियुक्त सेवा समाप्ति/पदच्युति से बचाता है । इसके अतिरिक्त, इस न्यायालय ने दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम, 1973 के उद्देश्यों और कारणों पर भी विचार किया और यह निष्कर्ष निकला कि शिक्षा निदेशक की पूर्व अनुमोदन प्राप्त किए बिना प्राइवेट विद्यालय के ड्राइवर की सेवा समाप्ति विधि में दूषित थी । इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि :–

> "45. हम प्रत्यर्थी-विद्यालय के विद्वान् काउंसेल द्वारा दिए गए दलील से सहमत होने पर असमर्थ हैं । डीएसई अधिनियम की धारा 8(2), एक कर्मचारी के पक्ष में प्रक्रियात्मक रक्षोपाय है, यह सुनिश्चित करने के लिए कि सेवा समाप्ति या पदच्युति का आदेश शिक्षा निदेशक के पूर्व अनुमोदन के बिना पारित नहीं किया गया है । यह मान्यताप्राप्त प्राइवेट विद्यालयों के कर्मचारी की मनमाना या अयुक्तियुक्त सेवा समाप्ति या पदच्युति से भी बचाता है ।"

14. इस न्यायालय ने **राज कुमार** बनाम **शिक्षा निदेशक और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में, यह अधिकथित किया है कि दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम, 1973 (संक्षेप में डीएसई) को अधिनियमित करते समय विधान-मंडल का आशय विद्यालय के कर्मचारियों की सेवा अवधि

को सुरक्षा उपलब्ध कराना और उनके नियोजन के निबंधनों और सेवा शर्तों को विनियमित करना था । दोनों सहायता प्राप्त और गैर-सहायता प्राप्त शैक्षणिक संस्थाओं को कार्य करते समय अनावश्यक सरकारी हस्तक्षेप से स्वतंत्र होना चाहिए, इसके लिए इन संस्थाओं के कर्मचारियों के नियोजन की शर्तों के साथ सामंजस्य बैठाने की आवश्यकता होती है और उनके हितों के रक्षोपाय के लिए पर्याप्त सावधानी बरतने के लिए उपबंध होने चाहिए । डीएसई अधिनियम की धारा 8(2) एक ऐसा ही सावधानी बरतने का रक्षोपाय है जिसकी अनुसरण करने की आवश्यकता होती है, यह सुनिश्चित करने के लिए कि शैक्षणिक संस्थाओं के कर्मचारी, प्रबंधतंत्र के हाथों अनुचित व्यवहार से ग्रसित तो नहीं हो रहे हैं ।

15. रिट आवेदन, पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, स्पष्टत: कायम रखे जाने योग्य है और इतना ही यह **रमेश अहलुवालिया** बनाम **पंजाब राज्य और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में, इस न्यायालय के विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए, कायम रखे जाने योग्य है जिसमें इस न्यायालय ने विस्तारपूर्वक ऐसे विवाद्यक पर विचार किया है और इस प्रकार मत व्यक्त किया है :-

> "13. पूर्वोक्त मामले में, इस न्यायालय ने ऐसी परिस्थितियों पर भी विचार किया था जहां उस लेक्चरार की सेवाओं को समाप्त कर दिया गया था जो एंडी मुक्ति सद्गुरु श्री मुक्ताजी वंदास स्वामी स्वर्ण जयंती महोत्सव स्मारक ट्रस्ट द्वारा संचालित कॉलेज में कार्य कर रहा था । उन परिस्थितियों में, इस न्यायालय ने स्पष्टत: निम्नलिखित मत व्यक्त किया था । (वी. आर. रुदानी केस, एस. सी. सी. पीपी 700-701, पैरा 20 और 22) -
>
> > 20. अनुच्छेद 226 में, प्रयुक्त शब्द 'प्राधिकारी' के संदर्भ में अनुच्छेद 12 के निबंधनों की तरह साधारण अर्थान्वयन करना चाहिए । अनुच्छेद 12, अनुच्छेद 32 के अधीन मूल अधिकारों के प्रवर्तन के प्रयोजन के लिए ही मात्र सुसंगत है । अनुच्छेद 226, मूल अधिकारों के साथ ही गैर-मूल अधिकारों के प्रवर्तन हेतु रिट जारी करने के लिए उच्च

न्यायालयों को शक्ति प्रदत्त करता है । इसलिए, अनुच्छेद 226 में प्रयुक्त शब्द 'कोई व्यक्ति या प्राधिकारी' मात्र कानूनी प्राधिकारियों और राज्य के उपकरणों तक ही सीमित नहीं करता है । उसके अधीन लोक कर्तव्यों का पालन करने वाला कोई अन्य व्यक्ति या निकाय भी आ सकता है । संबंधित निकाय का प्ररूप अत्यधिक सुसंगत नहीं है । सुसंगत क्या है यह निकाय पर अधिरोपित कर्तव्यों की प्रकृति पर निर्भर करता है । कर्तव्यों का न्यायनिर्णयन, प्रभावित पक्षकार को व्यक्ति या प्राधिकारी द्वारा धारित सकारात्मक बाध्यताओं के प्रकाश में करना चाहिए । कर्तव्य किन साधनों द्वारा अधिरोपित है, कोई विषय नहीं है, यदि सकारात्मक बाध्याताएं अस्तित्व में हैं तो परमादेश का रिट जारी करने से इनकार नहीं किया जा सकता है ।

22. यहां पुन: हम यह इंगित कर सकते हैं कि परमादेश का रिट जारी करने से इस आधार पर इनकार नहीं किया जा सकता है कि प्रवर्तित कर्तव्य, संविधि द्वारा अधिरोपित नहीं है । इस विधि के विकास पर टिप्पण करते हुए प्राफेसर डी. स्मिथ ने यह कथन किया है कि 'परमादेश रिट द्वारा प्रवर्तनीय होने के लिए लोक कर्तव्य को संविधि द्वारा अधिरोपित होना आवश्यक नहीं है । कर्तव्य के लिए मात्र यह पर्याप्त होता है कि वह चार्टर, कॉमन लॉ, प्रथा या संविदा द्वारा अधिरोपित है । हम इस मत से सहमत हैं । लोगों के अधिकारों को प्रभावित करने वाले निकायों के तीव्रगामी प्रसार पर न्यायिक नियंत्रण को कठोर उलझन में नहीं रखा जाना चाहिए । इसे विभिन्न परिस्थितियों की आवश्यकताओं के अनुसार लचीला बनाए रखा जाना चाहिए । परमादेश रिट एक बहुत ही व्यापक उपचार है, उसे 'जहां कहीं भी अन्याय पाया जाता है', आसानी से उपलब्ध होना चाहिए । तकनीकियां, अनुच्छेद 226 के अधीन अनुतोष को मंजूर करने के रास्ते में नहीं आनी चाहिए । इसलिए, हम अपीलार्थी के विद्वान्

काउंसेल द्वारा दिए गए इस तर्क को कि रिट याचिका कायम रखे जाने योग्य नहीं है, नामंजूर करते हैं ।

पूर्वोक्त मताभिव्यक्तियों को पुन: दोहराया गया है और इस न्यायालय के कई निर्णयों में भी दोहराया गया है जिनमें से **उन्नी कृष्णन्** और **जी. टेलीफिल्म्स लि.** वाले मामले में दिए गए निर्णय को अपीलार्थी श्री पारिख की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा हमारे नोटिस में लाया गया है ।

14. इस न्यायालय के पूर्वोक्त उल्लिखित निर्णय में अधिकथित विधि को ध्यान में रखते हुए, विद्वान् एकल न्यायाधीश के निर्णय के साथ ही उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ के निर्णय को कायम नहीं रखा जा सकता है, इस प्रतिपादना पर कि रिट याचिका कायम रखे जाने योग्य नहीं है कि मात्र प्रत्यर्थी-संस्था एक शुद्धत: एक गैर-सहायता प्राप्त प्राइवेट शैक्षणिक संस्था है । अपीलार्थी ने विनिर्दिष्टत:, यह अभिवाक् किया है कि प्रत्यर्थी लोक कृत्यों को करते हैं अर्थात् संपूर्ण भारत में स्थित अपनी संस्थाओं में बच्चों को शिक्षा उपलब्ध कराने का कार्य करते हैं ।"

(रेखांकन जोर देने के लिए किया गया है)

पूर्वोक्त विनिश्चयों से यह प्रकट होता है कि रिट आवेदन, प्राइवेट गैर-सहायता प्राप्त शैक्षणिक संस्थाओं के विरुद्ध भी कायम रखे जा सकते हैं ।

16. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने **प्रबंध समिति, दिल्ली पब्लिक विद्यालय और अन्य** बनाम **एम. के. गांधी और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में, इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लिया है जिसमें अध्यापकों की सेवा समाप्ति का प्रश्न अंतर्वलित था । प्रबंध समिति ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय के विनिश्चय के विरुद्ध इस न्यायालय में एक सिविल अपील फाइल की, यह दलील देते हुए कि दिल्ली पब्लिक विद्यालय, गाजियाबाद, संविधान, 1950 के अनुच्छेद 12 के अर्थान्तर्गत एक 'राज्य' नहीं था । अंतर्वलित प्रश्न यह था कि जांच किए बिना प्राइवेट विद्यालय के अध्यापकों की सेवा समाप्ति उप-विधियों के

प्रतिकूल था । इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि रिट आवेदन कायम रखे जाने योग्य नहीं था क्योंकि प्राइवेट विद्यालय, संविधान, 1950 के अनुच्छेद 12 के अधीन 'राज्य' नहीं था । यहां यह उल्लेख करना समुचित है कि शासकीय प्राधिकारी अनुमोदन का प्रश्न **एम. के. गांधी** (उपर्युक्त) वाले मामले में अंतर्वलित नहीं था । इस प्रकार, यह विनिश्चय विभेदनीय है ।

17. अपीलार्थी की ओर से अवलंबित **सतिम्बला शर्मा और अन्य** बनाम **सेंट पॉल सीनियर सेकेंडरी विद्यालय और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में, अंतर्वलित प्रश्न यह था कि क्या एक गैर-सहायता प्राप्त प्राइवेट संस्था, लोक विधि प्रवर्तन के अध्यधीन है और किस सीमा तक । समान कार्य के लिए समान वेतन की अवधारणा का अवलंब गैर-सहायता प्राप्त संस्थाओं में सरकारी और सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों के अध्यापकों के संबंध में समानता के आधार पर लिया जाता है । यह मत व्यक्त किया गया कि संविधान, 1950 के अनुच्छेद 14 और 39(घ) में समाविष्ट समानता का अधिकार मात्र राज्य के विरुद्ध ही उपलब्ध है । गैर-सहायता प्राप्त प्राइवेट अल्पसंख्यक स्कूलों के विरुद्ध इसका दावा नहीं किया जा सकता है । सरकारी विद्यालय के अध्यापकों को प्राय: सरकारी निधियों से वेतन दिया जाता है और प्राइवेट गैर-सहायता प्राप्त स्कूलों के अध्यापकों को शुल्कों और प्राइवेट स्कूलों के अन्य स्रोतों से वेतन दिया जाता है । गैर-सहायता प्राप्त प्राइवेट शैक्षणिक संस्थाओं में अध्यापकों के पक्ष में कानूनी उपबंधों के अभाव में कोई अनुतोष नहीं दिया जा सकता है । प्रश्नगत विद्यालय, हिमाचल प्रदेश सरकार से कोई सहायता अनुदान प्राप्त नहीं करता है और अध्यापकों के पक्ष में कोई ऐसा उपबंध नहीं है जिससे कि वह उन्हें समान वेतन पाने का दावा करने को समर्थ बनाता है । विनिश्चय, तथ्यों पर पूर्णतया विभेदनीय है और अधिकथित विधि की प्रतिपादना भिन्न क्षेत्र में प्रवर्तित होती है ।

18. इसी प्रकार, **सुष्मिता बसु और अन्य** बनाम **बल्लीगुंजे शिक्षा समिति और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में, अपीलार्थी, पश्चिमी बंगाल राज्य में एक मान्यता प्राप्त प्राइवेट शैक्षणिक संस्था में कार्य कर रहा था । विद्यालय, सरकार से कोई सहायता अनुदान प्राप्त नहीं कर रहे थे,

किन्तु विद्यालय में कार्यरत अनुमोदित अध्यापकों के लिए महंगाई भत्ते प्राप्त कर रहे थे । विवाद्यक, प्रथम वेतन आयोग और द्वितीय वेतन आयोग की सिफारिशों को लागू करने के संबंध में था, यद्यपि, कोई कानूनी उपबंध नहीं था अथवा तृतीय वेतन आयोग की सिफारिशों को लागू करने के लिए प्राइवेट गैर-सहायता प्राप्त शैक्षणिक संस्थाओं को निर्देश देते हुए कोई शासकीय आदेश भी नहीं था, वे स्कूलों द्वारा अध्यापकों के साथ उनके करार के अनुसार लागू होने थे । यद्यपि, प्रबंधतंत्र भी तृतीय वेतन आयोग की सिफारिशों से लागू होते थे, इस अर्थ में कि अध्यापकों के वेतन में उक्त रिपोर्ट के निबंधनों के अनुसार वृद्धि होने थे, संस्था ने भूतलक्षी प्रभाव से वेतन वृद्धि करने से इनकार कर दिया था । संस्था ने तारीख 1 जनवरी, 1998 से तृतीय वेतन आयोग की सिफारिशों को भूतलक्षी प्रभाव से देने से इनकार कर दिया । अंततोगत्वा, इस न्यायालय ने **सुष्मिता बसु** (उपर्युक्त) वाले मामले में, यह मत व्यक्त किया कि इस न्यायालय द्वारा प्राइवेट संस्थाओं के विरुद्ध जारी परमादेश का रिट तभी न्यायानुमत होगा यदि लोक विधि के अवयव अंतर्वलित है ।

19. **सुष्मिता बसु** (उपर्युक्त) वाले मामले के तथ्यात्मक पहलू भिन्न थे । यह सरकारी सहायता प्राप्त संस्थाओं तथा गैर-सहायता प्राप्त संस्थाओं और स्कूलों में समानता के संबंध में था जो वेतन आयोग की सिफारिशों को लागू करने के आबद्ध नहीं थे । वर्तमान मामले में, ऐसी प्रतिपादना अंतर्वलित नहीं है । अतएव, यह विनिश्चय, वर्तमान मामले में लागू नहीं होता है ।

20. पूर्वोक्त विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए, हमें यह अभिनिर्धारित करने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि रिट आवेदन कायम रखे जाने योग्य है जैसा कि उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ द्वारा सही ही अभिनिर्धारित किया गया है ।

21. अब, हम पुन: बहाली और पिछली मजदूरियों के अनुतोष के प्रश्न पर विचार करते हैं, वर्तमान मामले के तथ्यात्मक पहलू को ध्यान में रखते हुए, हमें इस तथ्य को ध्यान में रखना है कि संबंधित

प्राधिकारियों का अनुमोदन नहीं लिया गया था और आक्षेपित पदच्युति आदेश अत्यधिक मनमाने तरीके से पारित किया गया था । यह विवादित नहीं है कि कोई विभागीय जांच नहीं की गई थी ।

22. **अनूप जायसवाल** बनाम **भारत सरकार और एक अन्य**[1] वाले मामले में, अपीलार्थी, परिवीक्षाधीन के रूप में प्रशिक्षण ले रहा था । विशिष्ट दिन को सभी प्रशिक्षु उस स्थान पर विलंब से पहुंचे जहां पी.टी./निरशस्त्र लड़ाई का अभ्यास किया जाना था । एक जांच आरंभ की गई थी और आईपीएस का एक सदस्य होने के नाते उसकी अनुपयुक्तता के आधार पर आईपीएस (परिवीक्षा) नियम 1954 के नियम 12(ख) के अधीन आक्षेपित सेवामुक्ति का आदेश पारित किया गया था । यह अभिनिर्धारित किया गया था कि आदेश दांडिक प्रकृति का था जिसमें किसी समुचित जांच का अभाव था । इसे निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया था :-

> "13. ..... यद्यपि, सेवामुक्ति का आदेश अनिश्चित हो सकता है, यह एक मात्र आधार पर नहीं हो सकता है । यद्यपि, सरकार की फाइल में नोटिंग असंगत हो सकते हैं, फिर भी आदेश के लिए हेतुक की अवहेलना नहीं की जा सकती है । निदेशक की सिफारिश जो आदेश पारित करने के लिए आधार है, को इसके सही अर्थ को अवधारित करने के प्रयोजन के लिए आदेश के साथ परिशीलन किया जाना चाहिए । यदि, दोनों का परिशीलन करने के पश्चात् न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अभिकथित अवचार का कृत्य आदेश का हेतुक है और यह कि किन्तु उसके लिए वह घटना इस प्रकार घटित हुआ है कि यह अपरिहार्य हो जाता है कि पारित सेवामुक्ति का आदेश उस आधार की कोटि में आता है जैसा कि अपीलार्थी को संविधान के अनुच्छेद 311(2) में यथाउपबंधित स्वयं की प्रतिरक्षा करने का युक्तियुक्त अवसर प्रदान नहीं किया गया है ।"

---

[1] (1984) 2 एस. सी. सी. 369.

23. वर्तमान मामले में, कर्मचारी, जांच किए बिना पारित आक्षेपित आदेश द्वारा सेवा से पदच्युति करने के पूर्व पांच वर्ष की सेवा कर चुका है, हम, अपीलार्थी-विद्यालय के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा उद्भूत इस निवेदन को ग्रहण नहीं कर सकते हैं कि पिछली मजदूरियों से इनकार कर देना चाहिए । तरीका जिसमें सेवा समाप्ति का आदेश पारित किया गया था, स्पष्टत: मनमाना है तथा आदेश, अवैध और शून्य है और इस प्रकार, पिछली मजदूरियों को दिया जाना चाहिए ।

24. परिणामत:, सिविल अपील खारिज की जाती है । खर्चे का कोई आदेश पारित नहीं किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

क.

[2019] 3 उम. नि. प. 251

सीमेंट वर्कर्स मंडल

बनाम

ग्लोबल सीमेंट्स लि. (एचएमपी सीमेंट्स लि.) और अन्य

[2010 की सिविल अपील सं. 5360]

14 फरवरी, 2019

न्यायमूर्ति अभय मनोहर सप्रे और न्यायमूर्ति दिनेश महेश्वरी

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 20] – अपील – राज्य क्षेत्रीय अधिकारिता – उच्च न्यायालय की अधिकारिता के भीतर किसी कंपनी द्वारा कारबार किया जाना – कंपनी और उसके कर्मकारों के बीच विवाद उद्भूत होना – कंपनी द्वारा संबंधित उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका फाइल किया जाना – रिट याचिका ग्रहण किया जाना – चुनौती – यदि किसी उच्च न्यायालय की क्षेत्रीय अधिकारिता के भीतर किसी मामले में कोई वाद